ISSN 2395-051X

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महात्मा गाँधी की आर्थिक विचारधारा की प्रासंगिकता

डॉ. आनंद तिवारी
विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

महात्मा गाँधी न तो राजनीतिक थे न ही अर्थशास्त्री, न ही समाजशास्त्री और न ही स्थापित राजनेता, न ही पत्रकार, न ही चिकित्सक और न ही शिक्षाशास्त्री या धर्मगुरु परंतु जब भी राजनीति, अर्थनीति, समाजनीति, शिक्षा, चिकित्सा, पत्रकारिता या धर्म जैसे पहलुओं पर विमर्श होता है कहीं न कहीं गाँधी जी को अवश्य ही रेखांकित किया जाता है। गाँधी एक व्यक्ति नहीं अपितु विचार थे। उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रयोग धर्मिता को अपनाया। सत्य व अहिंसा के मार्ग पर चलकर सादगी को आत्मसात किया। भारत की नब्ज को उन्होंने जाना और समझा। भारत का एक समग्र राष्ट्र के रूप में कैसे विकास हो ताकि भारत की पहचान आत्मनिर्भर तथा साधन सम्पन्न राष्ट्र के रूप में विश्व मानचित्र पर बन सके। उनकी परिकल्पना भारत को ऐसे राष्ट्र के रूप में स्थापित करने की थी जिसमें न्याय, समता, धर्म, वर्ग, लिंग की समानता हो तथा आर्थिक असमानता, शोषण, पूंजीवाद, केन्द्रीयकरण, अन्याय, प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के खिलाफ थे। उनका मानना था कि मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे न केवल सहयोगी है बल्कि एक दूसरे के पूरक भी हैं। प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए।

आज गाँधी के विचारों की प्रासंगिकता और भी बढ़ गयी है आज जब अर्थव्यवस्था मंदीकाल के दौर से गुजर रही है, गाँवों में अदृश्य बेरोजगारी के चलते एक ओर खेतीहर श्रमिकों के नगरीय प्रवास की प्रवृत्ति बढ़ रही है दूसरी ओर कृषि लागतों में हो रही उत्तरोत्तर वृद्धि ने लघु एवं सीमांत कृषकों को कृषि क्षेत्र को छोड़ने हेतु विवश कर दिया है। कृषि आधारित उद्योग उपेक्षित हो रहे हैं पूंजीवाद तथा केन्द्रीयकरण के बढ़ते प्रभाव के कारण आर्थिक विषमता का विशवृक्ष पनपता जा रहा है। शहरी बेकारी के चलते युवा वर्ग घोर निराशा तथा अवसाद की स्थिति से गुजर रहा है। इन स्थितियों में जब हम विकास में अंतिम व्यक्ति को समाहित कर समावेशी, एकीकृत तथा समन्वित विकास की बात करते हैं तो गाँधी विचारधारा को अपनाने हेतु पुनर्विचार करने के अलावा हमारे नियोजकों के पास कौन सा विकल्प बचता है यह एक विचारणीय प्रश्न है।

मुख्य शब्द - गांधीवाद, पूंजीवाद, साम्यवाद, मॉडल, अपरिग्रह ।

शोध समस्या का चयन -

महात्मा गाँधी न तो अर्थशास्त्र के जनक रहे हैं न ही आर्थिक सिद्धान्तों के प्रणेता रहे हैं साथ ही न तो उनकी पहचान अर्थशास्त्री के रूप में स्थापित हुई है और न ही ही आर्थिक विचारों के प्रतिपादक मनीषी या

ISSN 2395-051X

अध्येता के रूप में ही, न ही गाँधी जी किसी गाँधीवाद के पुरोधा रहे हैं न ही पूंजीवाद, साम्यवाद, वामपंथ या दक्षिण पंथी विचारधारा के समर्थक या कटु आलोचक रहे हैं। महात्मा गाँधी ने व्यक्तिगत तथा सार्वजनीन जीवन में सदैव सत्य का प्रयोग किया और सत्य, अहिंसा तथा अपरिग्रह के मार्ग को अंगीकार कर उन्होंने असत्य को सत्य से हिंसा को अहिंसा से अविश्वास को विश्वास से तथा घृणा को प्रेम से जीतने का प्रयास किया। सत्य व अहिंसा के मार्ग पर चलकर उन्होंने जो भी आर्थिक सूत्रों का प्रतिपादन किया वही सूत्र उनकी आर्थिक विचारधारा के बुनियादी स्त्रोत माने जाते हैं।

आज भारत समूचे विश्व में अग्रणी राष्ट्रों की दौड़ में शामिल हो गया है। विश्व मानचित्र पर भारत ने समूची दुनिया में चाहे विज्ञान तथा तकनीक की बात करें, चाहे व्यापार तथा उद्योग की बात करें, चाहे कृषि ग्रामीण तथा नगरीय अर्थव्यवस्था की बात करें और चाहे सूचना की आधुनिक तकनीक के रूप में डिजिटल इंडिया, ई-कॉमर्स, ऑनलाईन बैंकिंग की बात करें, आर्थिक विकास का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जिसमें भारत ने अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित न की है। मानव संसाधन विकास के चारों आयामों शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा आवास के साथ-साथ जीवन आयु प्रत्याशा में वृद्धि तथा जीवन स्तर में उत्तरोत्तर सुधार इस बात के संकेतक हैं कि आर्थिक रूप से हम प्रगतिशील तथा विकसित अर्थव्यवस्था के रूप में अपनी पहचान अंकित करने में अग्रसर हो रहे हैं।

निःसंदेह तथा निर्विवाद रूप से आर्थिक विकास के सभी मानक भारतीय अर्थव्यवस्था हेतु शुभ संकेतक हैं परंतु जब हम भारत के संदर्भ में सर्वांगीण विकास की बात करते हैं, एकीकृत तथा समन्वित प्रगति पर चर्चा करते हैं, और समावेशी विकास की अवधारणा के साकार होने की बात करते हैं तो कहीं न कहीं इन मानकों की कसौटी पर भारतीय अर्थव्यवस्था को खड़ा नहीं पाते हैं। कतिपय प्रश्न ऐसे हैं जिनका उत्तर खोजना आज की महती आवश्यकता है जैसे आर्थिक विकास की दर में वृद्धि होने के बावजूद बेरोजगारी क्यों भयावह रूप ले रही है? खाद्यान्न की उत्पादकता बढ़ने के बावजूद भी किसान आत्महत्या करने के लिए क्यों विवश हो रहे हैं? कृषि पर बढ़ती लागतों तथा किसानों के बढ़ते ऋण भार के कारण कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्र से मजदूर पलायन करने को क्यों मजबूर हो रहे हैं? प्रति व्यक्ति आय वृद्धि के साथ गरीबी के दुष्चक्र से आम जनमानस क्यों नहीं उभर पा रहा है?

इन प्रश्नों के उत्तर खोजने के साथ-साथ हमें यह भी विचार करना होगा कि आज विकास के जो प्रतिमान स्थापित किए है उनकी कितनी कीमत प्रकृति ने चुकायी है। पर्यावरणीय क्षति का आंकलन करना भी आज आवश्यक हो गया है। पारिस्थितिकीय असंतुलन, प्राकृतिक पदार्थों की स्थिरीकरण, वनों की समाप्ति, भूमिगत जल तथा पेयजल संकट तथा पर्यावरणीय गति के रूप में जलवायु परिवर्तन, वायु तथा जल प्रदूषण आदि समस्याओं ने भावी पीढ़ियों के जीवन को संकट में डाल दिया है।

आर्थिक विकास से सम्बद्ध अनेक प्रश्न आसत्र होते हैं जो आर्थिक विकास के सिद्धांतों की सार्थकता से संबंधित हैं क्या ये आर्थिक विकास के आधुनिक सिद्धांतों, समावेशी समन्वित एवं सर्वांगीण विकास की परिकल्पना की कसौटी पर खरे उतर पा रहे हैं। वर्तमान में समूचा विश्व सूचना क्रांति के चलते एक गाँव की इकाई के रूप में स्थापित हो गया है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में बात करें तो चाहे हम स्वच्छ भारत मिशन की बात

करें, चाहे पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन की बात करें, चाहे स्टार्ट अप, मेक इन इंडिया, अथवा स्वरोजगार संबंधी रोजगार मूलक योजनाओं के प्रभावी ढंग से लागू करने की बात करें, चाहे हस्तशिल्प, हथकरघा, श्रमिक संघ तथा बुनकर संघ की एकजुटता के माध्यम से स्वदेशी तथा लघु कुटीर उद्योग की स्थापना तथा विकास की बात करें और चाहे बड़े-बड़े औद्योगिक घरानों द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य तथा गरीबों के कल्याण हेतु अपने अंशदान की बात करें साथ ही कारपोरेट जगत द्वारा सामाजिक दायित्व के रूप में पर्यावरण संरक्षण की दिशा में किए जाने वाले सकारात्मक कदम की बात करें। क्या ये सभी कदम गाँधी के आर्थिक विचारधारा से सम्बद्ध पहलू नहीं है। कौन कहता है कि गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता समाप्त हो गई है। नवीन आर्थिक चुनौतियों ने गाँधी के आर्थिक विचारों को और भी प्रासंगिक बना दिया है।

महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारधारा के निर्धारक घटक -

ग्राम स्वराज :-महात्मा गाँधी ये मानते थे कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। भारत के लगभग सात लाख गाँवों में दो तिहाई आबादी बसती है। यदि भारत का विकास करना है तो प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर बनाना होगा और जिसे ग्राम स्वराज द्वारा पूरा किया जा सकता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ आधार बनाने हेतु यह आवश्यक है प्रत्येक गाँव को एक इकाई मानते हुए गाँव के प्राकृतिक संसाधन स्थानीय जलवायु तथा भूगोल की परिस्थिति को दृष्टिगत रखते हुए पृथक नियोजन किया जाये। गाँव के लोगों की सहभागिता सुनिश्चित कर विकास तथा जनकल्याणकारी योजनायें बनाने हेतु स्थानीय जनसमुदाय को नीति निर्धारण तथा निर्णय प्रक्रिया में शामिल किया जाये। पंचायती राज व्यवस्था द्वारा बजट आवंटन कर राजनैतिक अधिकारों के प्रत्यायोजन द्वारा ग्राम स्वराज के सपने को पूरा किया जा सकता है।

विकेन्द्रीयकरण :-गाँधी के आर्थिक सत्ता के केन्द्रीयकरण के मुखर विरोधी थे, केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति उत्पादन तथा आय के संसाधनों पर समाज के मुट्ठीभर लोगों का स्वामित्व आ जाता है, जिससे पूंजीवाद तथा एकाधिकारी प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है। परिणामतः शोषक वर्ग द्वारा शोषित वर्ग के प्रति अन्याय और शोषण की प्रवृत्ति पनपती है। समाज में प्रतिस्पर्धा घृणा तथा द्वेष का वातावरण निर्मित होता है। गाँधी की विचारधारा एक समाज की स्थापना है जो समतामूलक समाज का हो साथ ही अन्यायपूर्ण तथा शोषण विहीन हो, उत्पादन, आय तथा पूंजी के विकेन्द्रीयकरण से समाज पर आय तथा संपत्ति का न केवल समान वितरण होगा अपितु श्रम तथा पूंजी, उत्पादन क्रियायें दोनों की सम्मानपूर्ण सहभागिता सुनिश्चित हो सकेगी।

कुटीर व ग्राम्य उद्योग :- महात्मा गाँधी का मत था कि अर्थव्यवस्था के विकास हेतु औद्योगीकरण आवश्यक है परंतु जीवन की बुनियादी जरूरतों जैसे खाद्यान्न, वस्त्र तथा दैनिक उपयोग में लायी जाने वाली वस्तुओं जिन्हें उत्पादन हेतु कच्चा माल ग्रामीण क्षेत्रों से उपलब्ध हो सकता है ऐसे कृषि आधारित उद्योग, खाद्य प्रासंस्करण, उद्योग तथा वनोपज, उद्योग, हस्तशिल्प, हथकरघा, खादी उद्योगों को कुटीर तथा ग्राम्य उद्योग के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए, इससे गरीबी, बेरोजगारी जैसी समस्याओं का निराकरण हो सकेगा साथ ही ग्रामीण खेतीहर मजदूरों को नगरीय प्रवास की समस्याओं से मुक्ति मिल सकेगी। जिन उत्पादों का निर्माण कुटीर उद्योगों के माध्यम से संभव न हो उन उत्पादों को वृहद उद्योगों के द्वारा किया जाना चाहिए।

न्यास का सिद्धांत :-न्यासिता के सिद्धांत की बुनियादी मान्यता यही है कि धनी, अमीर तथा सम्पन्न वर्ग के

पास जो सम्पत्ति, धन तथा पूंजी का आधिपत्य तथा स्वामित्वाधिकार है, ये सभी वर्ग सम्पत्तियों के स्वामी नहीं हैं अपितु ट्रस्टी हैं। इन सम्पत्तियों के उपार्जन से प्राप्त आय तथा लाभ को समाज के सभी वर्गों के हित में करना चाहिए, उत्पत्ति के विभिन्न उपादानों जैसे भूमिपति (किसान) को भूमि पर कार्य के बदले में लगान, श्रमिक को श्रम के प्रतिफलरूप भृत्ति, पूंजीपति को पूंजी के बदले ब्याज, प्रबंधक वर्ग को प्रबंधन के परिश्रमिक के रूप में वेतन दिया जाना चाहिए तथा अंततः साहसी वर्ग को जोखिम के बदले उचित लाभ अर्जित करना चाहिए। लाभ विभाजन पश्चात उद्यमियों को समाजहित में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा गरीब तथा निर्धन वर्ग को आर्थिक सहायता स्वरूप अंशदान करना चाहिए। अमीर वर्ग को इंटरशिप की भावना को ध्यान में रखकर सम्पत्तियों का संरक्षण करना चाहिए।

पर्यावरण संरक्षण और विकास :- गाँधी जी आर्थिक तथा नैतिकता के पहलुओं को एक-दूसरे के पूरक मानते थे उनका मानना था आर्थिक प्रतिस्पर्धा में हमें नैतिकता को कदापि विस्मृत नहीं करना चाहिए क्योंकि प्रकृति के नियम शाश्वत तथा पूर्ण सत्य है परंतु आर्थिक नियम सापेक्षिक होते हैं। इस पृथ्वी पर मानव की आवश्यकता के अनुसार प्रचुर संसाधन उपलब्ध है परंतु मनुष्य की लालसा के अनुरूप संसाधन उपलब्ध नहीं है। यदि मनुष्य अपनी आवश्यकता के अनुसार संसाधनों का उपयोग करे तो कोई अभावग्रस्त नहीं रहेगा। विकास की आधुनिक अवधारणा ने प्रकृति तथा पर्यावरण दोनों के समक्ष चुनौती उत्पन्न कर दी है जिससे निःसंदेह वर्तमान के साथ भावी पीढ़ी के जीवन के अस्तित्व का संकट खड़ा कर दिया है।

श्रम प्रधान तकनीक :- गाँधी जी ने दक्षिण अफ्रीका से भारत वापस आने पर समूचे भारत का भ्रमण किया और अनुभव किया कि भारत पश्चिमी देशों से दो मायनों में सर्वथा भिन्न राष्ट्र है एक तो जनाधिक्य के मामले में दूसरे कृषि पर दो तिहाई आबादी के संदर्भ में। भारत में गरीबी उन्मूलन तथा ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या के निराकरण का एक मात्र हल है श्रम प्रधान तकनीक अपनाया जाना। गाँधी मशीनों के विरोध में नहीं थे परंतु उनका मानना था जो कार्य मानवीय श्रम से किया जा सकता है ।

मानवीय संसाधन सर्वोपरि :- महात्मा गाँधी विकास का अभीष्ठतम उद्देश्य मानवीय विकास जिसमें आर्थिक सामाजिक राजनीतिक के साथ साथ सांस्कृतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास, को सर्वोपरि मानते थे। गाँधी के मानवीय विकास की अवधारणा समावेशी थी जिसमें अन्याय शोषण के स्थान पर समतामूलक तथा शोषणमुक्त समाज की स्थापना हो। मानव की गरिमा को दृष्टिगत रखते हुए हमेशा उन्होंने अंतिम व्यक्ति के विकास पर बल दिया।

संदर्भ -

1. दत्त एवं सुंदरम, भारतीय अर्थव्यवस्था : एस. चांद कम्पनी, दिल्ली, संस्करण 2013
2. पुरी एवं मिश्र, भारतीय अर्थव्यवस्था : हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुंबई, संस्करण वर्ष 2013
3. The Concept of Economic Growth : Ronald a Shearev 1961
4. The Challenge of World Poverty: Gunnav Myrdul 1970
5. Agrawal: A.N. and S.P. Sing Economic of Development OUP India, 1979